ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 51-57
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

संसाधन एवं मानव अर्न्तसम्बन्ध

सुनील कुमार ओझा
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, भूगोल विभाग, अमर नाथ मिश्र पी0जी0 कालेज दुबेछपरा–बलिया (उ0प्र0) भारत

Received- 21.05.2019, Revised- 26.05.2019, Accepted - 30.05.2019 E-mail: dr.sunilojha@gmail.com

सारांश : *संसाधन कोई पदार्थ या वस्तु नही है वह एक क्रिया है जो एक पदार्थ प्राप्त करता है या एक प्रक्रिया है, जिसमें वह पदार्थ भाग लेता है। अतः किसी आवश्यकता की पूर्ती हेतु जो कार्य किये जाते है वे संसाधन है। संसाधन दृष्टव्य एवं अदृश्य दोनों प्रकार के होते हैं। जिम्मरमैन ने संसाधन शब्द को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि संसाधन मानवीय वातावरण के वे पहलू है जो मानवीय आवश्यकताओं की आपूर्ती एवं सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति में सहयोग प्रदान करते है।*

कुंजी शब्द – संसाधन, वातावरण, प्राकृतिक तत्व, मानवीय तत्व, सांस्कृतिक तत्व, गत्यात्मकता, पारस्परिक अर्न्तक्रिया

संसाधन शब्द अंग्रेजी के ''रिसोर्स'' (Re + source) शब्द का हिन्दी रुपान्तरण है, जिसका शाब्दिक अर्थ क्रमशः 'लम्बी अवधि' एवं 'साधन' है, अर्थात जिस वस्तु पर लम्बी अवधि तक निर्भर रहा जाय वह संसाधन है। किन्तु प्रत्येक वस्तु को संसाधन नही कहा जा सकता, वह संसाधन तभी बनेगी, जब उसमें मनुष्य की आवश्यकता की पूर्ति की क्षमता हो।

इस प्रकार संसाधन कोई पदार्थ या वस्तु नही है, वह एक क्रिया है, जो एक पदार्थ प्राप्त करता है या एक प्रक्रिया है, जिसमें वह पदार्थ भाग लेता है अतः किसी आवश्यकता की पूर्ति हेतु जो कार्य किये जाते हैं, वे संसाधन हैं। यही कारण है कि 'मनुष्य के ज्ञान को सबसे बड़ा संसाधन' माना गया है; क्योंकि मानव का ज्ञान ही भौतिक पदार्थो को संसाधन का रुप प्रदान करता है। इसीलिए अनेक विद्वानों का मत है कि 'संसाधन' होते नहीं बनाये जाते हैं।

संसाधन एक विस्तृत शब्द है, जिसमें मानवीय आवश्यकताओं तथा सामाजिक उद्देश्यों की आपूर्ति करने वाले समस्त साधन सम्मिलित हैं। इन संसाधनों में केवल प्रकृति के तत्व ही सम्मिलित नहीं होते, वरन् वे मानवीय विशेषतायें एवं गुण भी आवश्यक रुप से संसाधनों की श्रेणी में सम्मिलित किये जाते हैं, जो मानवीय आवश्यकतओं एवं सामाजिक उद्देश्यों की आपूर्ति में सहयोग देता है।

इस प्रकार संसाधन क्रियाशीलता के सिद्धान्त के प्रतिफल हैं। मानव के शारीरिक एवं वौद्धिक क्षमता, ज्ञान, रुचि, राष्ट्रीय एवं सामाजिक संगठन, संस्कृति, आर्थिक विकास एवं राजनीतिक स्थिति आदि स्यवं में संसाधन हैं। अतः स्पष्ट है कि संसाधन दृश्टब्य एवं अदृश्य दोनों प्रकार के होते हैं।

मानवीय भूदृश्य, मनुष्य के ज्ञान एवं प्राकृतिक वातावरण के अन्तर्सम्बन्धों का प्रतिफल है, जो विभिन्न देश एवं काल में विभिन्न रूपों में परिलक्षित होता है। मानव अपने भौतिक वातावरण के साथ सांमजस्य स्थापित करके विभिन्न तत्वों का रूप बदलकर अपने जीवन–यापन के लिए उनका प्रयोग करता है।

फलस्वरूप विभिन्न प्रकार की आर्थिक क्रियाओं का जन्म होता है। मानव की इन आर्थिक कियाओं में मानव की आवश्यकता पूर्ति करने वाले तथा मानव को लाभ पहुँचाने वाले या सहयोग करने वाले सभी तत्व संसाधन कहलाते हैं, जिनमें प्राकृतिक वातावरण तत्वों के साथ–साथ मानवीय तत्व भी सम्मिलित है।

अध्ययन का उद्देश्य– प्रस्तुत अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य संसाधन एवं मानव अर्न्तसम्बन्धों की व्याख्या एवं परख करना है जिसके आधार पर प्राचीन काल से अब तक संसाधनों के प्रति मानव के उपभोग जनित कार्यो को समझा जा सके और भविष्य के लिए सतर्कता बरती जा सके।

विधि तंत्र– प्रस्तुत अध्ययन में पूर्ववर्ती विद्वानों द्वारा प्रस्तुत संसाधनों की संकल्पना, संसाधनों के वर्गीकरण एवं संसाधन मानव अर्न्तसम्बन्ध का अध्ययन कर विवेचनात्मक विधि तंत्र के आधार पर अध्ययन की पूर्णता प्रदान की गयी है।

विश्लेषण एवं व्याख्या– संसाधन शब्द के अर्थ को स्पष्टतः समझने के लिए मानव एवं उसके वातावरण के सम्बन्धो को भली प्रकार समझना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि मानव ने वातावरण के सहयोग द्वारा ही संसाधनों को जन्म दिया है। दूसरी ओर प्राकृतिक वातावरण के गोचर पदार्थ भी मानव के ज्ञान के अभाव में प्रयोगहीन थे और वे केवल तटस्थ तत्व ही थे, संसाधन नहीं। मानव कें बढते ज्ञान के द्वारा उन्हें प्रयोग में लाने पर ही वे संसाधन बनते गये। विभिन्न देश एवं काल में संसाधनों का स्वरुप एवं मात्रा भी भिन्न हो सकती है। कोई भी पदार्थ या तत्व एक संसाधन के रूप में कार्य कर सकता है, जबकि किसी

अनुरूपी लेखक

दूसरे स्थान या समय में यही उदासीन तत्व भी हो सकता है। यह वहाँ के मानव के कार्य करने की क्षमता एवं ज्ञान पर निर्भर करता है। अतः निष्कर्ष यह निकाला जा सकता है कि संसाधन कहलाने या बनने के लिए किसी भी पदार्थ या तत्व में निम्न गुणों का होना आवश्यक है –

(i) उस पदार्थ या तत्व में मानव के किसी भी निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति करने का क्षमता।

(ii) मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति या सहायता का आधार।

(iii) अवसर का लाभ उठाकर अपनी उपयोगिता एवं कार्य करने की योग्यता द्वारा मानव को कष्ट से बाहर निकाल लेने की क्षमता।

उक्त गुणों के द्वारा ही मानवीय वातावरण का तटस्थ तत्व संसाधन बना जाता है एवं इनके आभाव में वह तटस्थ ही बना रहता है।

उपर्युक्त विवेचना के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि 'संसाधन' शब्द किसी विशेष वस्तु या पदार्थ का नाम ही है, अपितु किसी वस्तु विशेष के गुण का नाम है, जिसके फलस्वरूप मनुष्य की कुछ इच्छाओं की पूर्ति होती है। उदाहरण के लिए कोयला स्वयं संसाधन नहीं है; वह संसाधन तभी कहलायेगा, जब वह मानव के लिए उष्मा या शक्ति प्रदान करता है। अतः कोयला संसाधन नहीं, वह संसाधन तभी कहलायेगा, जब वह मानव के लिए उष्मा या शक्ति प्रदान करता है। अतः कोयला संसाधन नहीं, अपितु उसकी वह उपयोगिता, जिसके द्वारा मानव की आवश्यकता पूर्ति होती है, संसाधन है। वस्तु या पदार्थ की संसाधनता मानव मूल्याकंन द्वारा निश्चित होती है।

विस्तारपूर्वक अगर दृष्टिपात किया जाय तो मानवीय वातावरण के समस्त तत्वों को तीन श्रेणियों में रखा जा सकता है–

(i) प्राकृतिक तत्व– वे तत्व जो भूमि की भौतिक एवं जैविक दशाओं में उत्पन्न हुये हैं।

(ii) मानवीय तत्व– जो मानव शक्ति के सन्दर्भ में जनसंख्या से उत्पन्न हुये हैं।

(iii) सांस्कृतिक तत्व– जो मनुष्य के विचारों, तकनीक एवं उद्देश्यों से उत्पन्न हुये हैं।

संसाधनों का जन्म इन तीनों ही प्रकार के तत्वों की पारस्परिक अन्तःक्रिया के फलस्वरूप होता है। मानव को लाभ पहुँचाने अथवा उसकी आवश्यकता पूर्ति में सहायक होने के साथ–साथ ये सभी तत्व संसाधन बनते चले जाते हैं।

मनुष्य के सांस्कृतिक विकास के साथ–साथ संसाधनों में भी परिवर्तन होता रहता है। देश व काल के परिप्रेक्ष्य में एक ही वस्तु संसाधन बन सकती है एवं वही संसाधन की कोटि में नहीं भी आ सकती है, जैसे ऊनी वस्तु ठण्डे प्रदेशों के लिए एक संसाधन है, किन्तु उष्ण प्रदेशों में वह संसाधन नहीं रह जाता। यदि समय के परिप्रेक्ष्य में हम देखे तो द्रव गैस पहले संसाधन नही थे, क्योंकि उनका समुचित उपयोग नही हो रहा था, किन्तु आज यह एक प्रमुख संसाधन बन गया है। क्योंकि अब इस पर खाना पकने लगा है। इस प्रकार स्पष्ट है कि मनुष्य की आवश्यकताओं एवं प्रौधोगिकी विकास के अनुसार बनते व समाप्त होते रहते हैं तथा इनके स्वरूप में भी परिवर्तन होता रहा है, जो चित्र 1 से स्पष्ट है।

संसाधन एक गत्यात्मक संकल्पना है न कि स्थैतिक। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि ''संसाधन होते नहीं, अपितु वे बनते है।'' यह स्पष्ट एवं सत्य है कि ज्ञान अन्य सभी संसाधनों का जन्म दाता है, क्योंकि ज्ञान के अभाव में किसी वस्तु की शक्ति का उत्पादन या प्रयोग नहीं किया जा सकता और मानव के अभिष्ठ उद्देश्य की पूर्ति नहीं की जा सकती। इसलिए जिम्मरमैन एवं मिचेल ने लिखा है कि ''मनुष्य का ज्ञान सबसे बड़ा संसाधन है।'' भूमि, सूर्य का प्रकाश, जल, वन, एवं वन्य प्राणी आदि मानव के जन्म से बहुत पहले से विद्यमान थे; परन्तु भूमि का उपयोग करके कृषि करना, पौधों के संरक्षण द्वारा फसलों का विकास तथा पवन एवं जल की ऊर्जा का प्रयोग करके पवन चक्कियाँ बनाना एवं पवन चक्कियाँ चलाना मनुष्य ने अपने विकास के इतिहास के बाद के कालों में सीखा। चूँकि मनुष्य के ज्ञान और सांस्कृतिक वौद्धिक क्षमता में परिवर्तन होता रहता है, अतः प्राकृतिक वातावरण की उपयोगिता में भी वह परिवर्तन करता रहता है तथा विभिन्न संसाधनों को जन्म देता रहता है। जैसा कि वोमेन ने लिखा है, ''वातावरण के भौगोलिक तत्व सीमित अर्थ में ही स्थैतिक है ज्यों ही मानवीय तत्वों से उनकी सम्बद्धता होती है, वे मानवीय तत्वों अथवा विशेषतओं की तरह ही गतिशील हो जाते हैं।'' अतः जहाँ तक संसाधनों की गतिशीलता का सम्बन्ध है यह कहा जा सकता है कि संसाधन होते नहीं अपितु वे बनते रहते है।

संसाधनों की गत्यात्मकता को स्पष्टतः समझने के लिए मानव एवं वातावरण के अर्न्तसम्बन्धों का भली–भाँति अध्ययन आवश्यक है। आदि काल में जब मानव में वर्तमान वौद्धिक क्षमता एवं प्राविधिक ज्ञान का नितान्त अभाव था तो वह अपने प्राकृतिक जगत से घिरा हुआ एक निरीह प्राणी मात्र था, जिसके लिए प्राकृतिक वातावरण के विभिन्न तत्व संसाधन न होकर मात्र तटस्थ तत्व थे, जिनसे वह अपनी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति मात्र कर पाता था। अपने अज्ञान के कारण ही वह अपने प्रकृति जगत में संघर्ष करने

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

में अक्षम था। उस स्थिति में प्राकृतिक जगत के वे अनेक तत्व उसके लिए प्रतिरोधक एवं निर्दयी थे, जो आज महत्वपूर्ण संसाधन बन गये है। जैसे–जैसे मानव ने अपनी वौद्धिक क्षमता बढ़ाकर प्राकृतिक वातावरण के साथ सक्रिय समंज्जन स्थापित किया तो प्राकृतिक वातावरण की वे शक्तियाँ, जो उसके लिए प्रतिरोधक थी महत्वपूर्ण संसाधन बनती चली गयी। पाषाण कालीन मानव और आधुनिक मानव में सिर्फ ज्ञान का ही अन्तर है, अतः स्पष्ट है कि मानवीय ज्ञान एवं तकनीकी ने मानव को उसकी प्रतिरोधक शक्तियों पर विजय प्राप्त करने में सहायता प्रदान की है। जैसे–जैसे मानव की वह शक्ति विकसित होती रहती है वह बराबर अपने वातावरण से संघर्ष करता रहता है और प्रतिरोधक शक्तियों को भी संसाधनों में परिवर्तन करता रहता है। अत संसाधनों की प्रक्रिया सदैव गतिशील बनी रहती है।

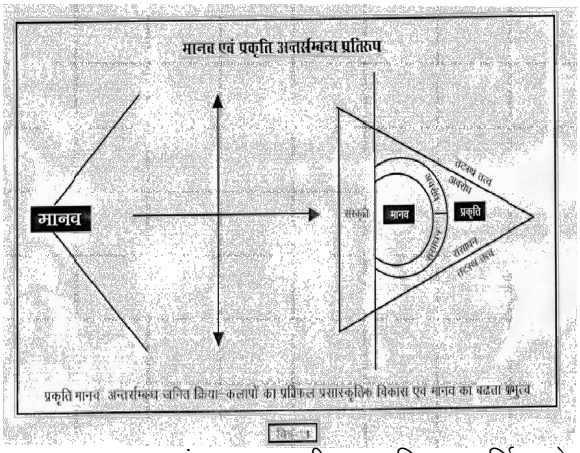

चित्र-1

मानव एवं वातावरण की पारस्परिक अन्तर्क्रिया के फलस्वरूप संसाधनों में विस्तार नही होता, अपितु अनुचित एवं अधिक उपयोग के कारण संसाधनों का संकुचन भी हुआ है। खनिज संसाधन अधिक शोषण के कारण समाप्त हो रहे हैं, अतः अनुचित एवं अधिक प्रयोग के साथ संसाधनों का संकुचन भी होता है जो कि संसाधनों की गतिशीलता को स्पष्ट करता है। अतः यह निश्चित रूप में कहा जा सकता है कि ''संसाधनों की संकल्पना एक गतिक संकल्पना है जो कि सदैव मानवीय इच्छाओं एवं प्रतिक्रियाओं के साथ–साथ गतिशील रहती है।'' आधुनिक गतिक स्कूल के समर्थकों के अनुसार संसाधन कार्यात्मक एवं संक्रियात्मक होते है अतः इनकी संकल्पना को निम्न दोनों ही रूपों में समझा जा सकता है –

1. संसाधनों की कार्यात्मक संकल्पना – इस विवेचना में यह स्पष्ट है कि मानव का ज्ञान ही सभी संसाधनों की जननी है क्योंकि यह निश्चित है कि विज्ञान भी किसी वस्तु के शक्ति का उत्पादन नहीं कर सकता। विज्ञान भी तभी सार्थक हो सकता है, जब हम अपने ज्ञान और ज्ञान से प्राप्त किसी वस्तु विशेष का उपयोग करेगें और ऐसा करने पर ही अभिष्ठ उद्देश्य की प्राप्ति कर सकते हैं।

संसाधनों को दो दृष्टिकोण से देखा जाता है। (i) भैतिक विज्ञान की दृष्टिकोण से,. (ii) सामाजिक विज्ञान की दृष्टिकोण से। भौतिक विज्ञान की दृष्टिकोण से विश्व में पदार्थ और उर्जा की मात्रा नियत हैं जबकि सामाजिक विज्ञान के अनुसार कुछ भी नियत नही है, प्रत्येक वस्तु परिवर्तनशील है। आपस में विरूद्ध विचार रखते हुये भी दोनों ही विचार अपने आप ठीक हैं। प्रथम विचार इसलिए ठीक है कि संसाधनों की मात्रा उपयोग को देखते हुए नियत है। परन्तु दूसरा विचार इस दावे के साथ स्वीकारा जाता है कि संसार में पृथ्वी एक अंशमात्र है और मानव इतनी बड़ी संख्या में होते हुए भी इसकी विशालता में एक सूक्ष्मतम खण्ड है।

इसलिए मानव के लिए इस विश्व में प्रत्येक पदार्थ अपरिमित मात्रा में विद्यमान है। मानव के लिए पृथ्वी तो अपरिवर्तित है, किन्तु संसाधन मानव सभ्यता के साथ बदलते रहते है। इस सम्बन्ध में बोमेन का विचार है कि 'पृथ्वी के स्वरूप में परिवर्तन शनैः शनैः होते हुए भी वह पदार्थ में पीढ़ी दर पीढ़ी अपरिवर्तित रहती है। इसके दीर्घकालिक परिवर्तन बहुत धीमें होते है। अतः भूगोल निश्चित तत्वों का अध्ययन है।' हैमिल्टन का विचार भी यही स्पष्ट करता है – ''यह तकनीकि ही है जो पदार्थ को मूल्य देती है। जो इसे मनुष्य के लिए उपयोगी बनाती है और लाभदायक कलाओं की तरह प्रकृति के उपहारों को बढ़ाती एवं पुनर्निर्मित करती है। तकनीकि के विकास के साथ–साथ कीमत का प्रभाव प्रकृतिक वस्तुओं से संसाधित वस्तुओं पर स्थानान्तरिक हो जाता है।''

इस विवेचन के बाद भी जिन लोगों की यह धारण है कि प्राकृतिक वातावरण नियत है या स्थिर है और भूमि की पूर्ति निश्चित है, को तीव्र विरोध का सामना करना पड़ता है, क्योकि संसाधनों की संकल्पना पूर्ण रूप से कर्मोपलक्षी मानवीय आवश्यकताओं और क्षमताओं से अलग न होने वाली है।

2. संसाधनों की संक्रियात्मक संकल्पना– संसाधन, मानव एवं प्राकृतिक जगत की पारस्परिक अन्तर्क्रिया का परिणाम है। अतः स्पष्ट है कि संसाधनों की उत्पत्ति दो तथ्यों की अन्तर्प्रक्रिया द्वारा होती है– (प) मानव, जो अपने उद्देयों की पूर्ति का उपाय खोज रहा है और अवसर का लाभ उठाकर अपने को कठिनाइयों से बाहर निकालने की क्षमता रखता है। (पप) मानव का वाह्य पदार्थ जगत अर्थात् 'प्राकृतिक' संसाधनों को समझने के लिए व्यक्ति को आधुनिक मानव और प्रकृति के बीच के सम्बन्धें को समझना आवश्यक है। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए मानव

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

के 'जन्तु स्तर' और 'मानव स्तर' पर विचार करना होगा। जन्तु स्तर पर मानव की आवश्यकतायें एवं क्षमतायें दोनों ही प्राकृतिक होती है, अतः वह केवल प्राकृतिक संसाधनों को ही नियत्रिंत करता है और प्रकृतिक जगत के तथ्य उसके लिए दो भागों में बॅट जाते हैं। उसको लाभ पहुँचाने वाले तथ्य 'प्राकृतिक संसाधन' एवं उसे हानि पहुँचाने वाले तथ्य प्राकृतिक अवरोध कहलाते हैं। इस स्तर पर जीवन विताते हुए वह एक उदासीन तत्वों के महासागर में डुबकी लगा रहा होता है, जिसके बारे में उसे ज्ञान नहीं है ये उदासीन तत्व प्रकृति के पदार्थ, ऊर्जा दशाओं, सम्बन्धों आदि का संयोग है, जो मानव को अनुकूल या प्रतिकूल किसी भी रूप में प्रभावित नहीं करते। अतः जन्तु स्तर पर मानव के संसाधनों की पेटी बहुत संकरी होती है, जो प्राकृतिक अवरोधों से घिरी होती है और मानव प्रकृति की आज्ञा का पालन करता हुआ अपनी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता रहता है।

डा॰ पी॰ई॰ मैकनाल के अनुसार ''प्राकृतिक संसाधन वे संसाधन हैं, जो प्रकृति द्वारा प्रदान किये जाते हैं एवं जो मनुष्यों के लिए उपयोगी है।''

समाजशास्त्रीय विश्व कोष के अनुसार ''संसाधन मानवीय पर्यावरण के वे पक्ष हैं जिनके द्वारा मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति में सुविधा होती है एवं सामाजिक लक्ष्यों की पूर्ति सम्भव होती है।''

इस प्रकार वे सभी तत्व, सेवाएँ, पदार्थ जो किसी रूप में मानव का कल्याण करते हैं; संसाधन कहलाते हैं। इन संसाधनों को उपयोगी बनाने का कार्य प्रकृति, मानव एवं संस्कृति करती है (पाठक–गणेश कुमार, 1990, पृष्ठ 33–34)।

''मानव के विभिन्न उद्देश्यों एवं आवश्यकताओं की पूर्ति अथवा कठिनाई का निवारण करने वाले या निवारण में योग देने वाले आश्रय या स्रोत को संसाधन की संज्ञा देते है''।

उक्त अर्थ में स्वयं कोई वस्तु या तत्व संसाधन नहीं हैं, उसकी संसाधनता मनुष्य की आवश्यकता पूर्ति या कठिनाई निवारण करने की आशिंक या पूर्ण क्षमता में निहित है। इसी प्रकार प्राकृतिक संसाधनों के साथ ही सांस्कृतिक संसाधन इत्यादि महत्वपूर्ण संसाधन की श्रेणी में आते है'', (तिवारी, वृजेश कुमार, 2002, पृष्ठ 151)।

इस प्रकार संसाधनों की इतनी बड़ी मात्रा एवं खोज उन संक्रियाओं का परिणाम है, जो मानव ने अपने बुद्धि एवं बल को प्रयोग करते हुए सन्तोषजनक और कष्ट साध्य अनुभावों से प्राप्त हुए ज्ञान–विज्ञान द्वारा प्राप्त की है। मानव के संसाधन मानव की कार्यकुशलता का ही परिणाम है जो शनैः शनैः उसके परिणाम से प्राप्त हुये हैं। यह भी सत्य है कि प्रकृति मानव को अपनी चतुराई को प्रदर्शित करने के अवसर प्रदान करती है, जिससे मानव ने प्रकृति के सीमित तत्वों से लाखों प्रकार के यौगिक निर्मित कर लिए हैं। अतः कहा जा सकता है कि ''संसाधनों की संकल्पना एक संक्रियात्मक संकल्पना है।''

संसाधनों का वर्गीकरण – पृथ्वी के धरातल पर उपस्थित वे सभी तत्व संसाधन हैं, जो किसी रूप में मानव की आवश्यकता की पूर्ति करते हैं अथवा पूर्ति में सहयोग देते है।'' संसाधनों के अनेक रूप हैं, अतः उनका वर्गीकरण भी अनेक दृष्टिकोणों से किया जा सकता है। जैसे संसाधनों की उत्पत्ति, उनकी उपलब्धता, उपयोगिता, गुणवत्ता एवं पुनः प्राप्ति की संभावना आदि।

उत्पत्ति के आधार पर वर्गीकरण – यह वर्गीकरण परिवेश के तत्वों की उत्पत्ति जनक गुणों पर आधारित है। इस आधार पर संसाधनों के वर्गीकरण का प्रयास सर्वप्रथम नार्टनग्रिसबर्ग ने किया था। ओबेन (1971) निजी संसाधनों का प्राकृतिक वर्गीकरण प्रस्तुत किया है। इस आधार पर संसाधनों को दो वर्गो में रखा जा सकता है। (चित्र 1.2)

(i) भौतिक संसाधन। (ii) जैविक संसाधन।

भौतिक संसाधन –ये प्रकृति प्रदत्त होते है एवं अपने विविध रूपों में संसार के प्रत्येक क्षेत्र में मिलते है जैसे– चट्टानें, धरातलीय स्वरूप, मिट्टी, जलवायु, जल एवं खनिज आदि। ये संसाधन अचल होते हैं एवं इनकी मात्रा भी निश्चित होती हैं। अतः इनका उपयोग एवं विनाश हो जाने पर सदैव के लिए समाप्त हो जाते हैं। इन्हें घटाया –बढ़ाया भी नहीं जा सकता। इनका उपयोग मनुष्य के सांस्कृतिक एवं प्रौद्योगिकी विकास से जुड़ा है। मनुष्य भौतिक संसाधनों के स्वरूप में परिवर्तन तो ला सकता है, किन्तु उसके स्वरूप को पूर्णतः बदल नहीं सकता है। मानव का अधिक हस्तक्षेप प्राकृतिक चक्र में गतिरोध पैदा करता है, फलस्वरूप भूकंप, ज्वालामुखी, तूफान, बाढ़, अकाल जैसे प्राकृतिक संकट उत्पन्न होते हैं। अतः इसका विवेकपूर्ण उपयोग आवश्यक है।

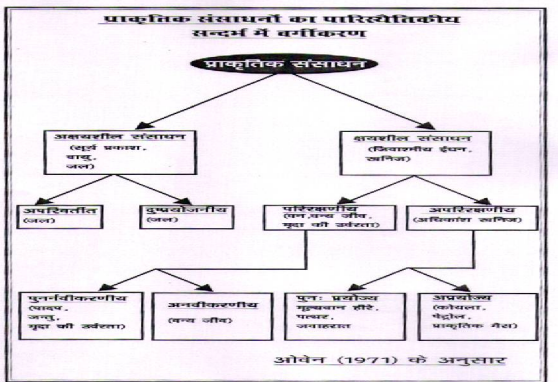

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

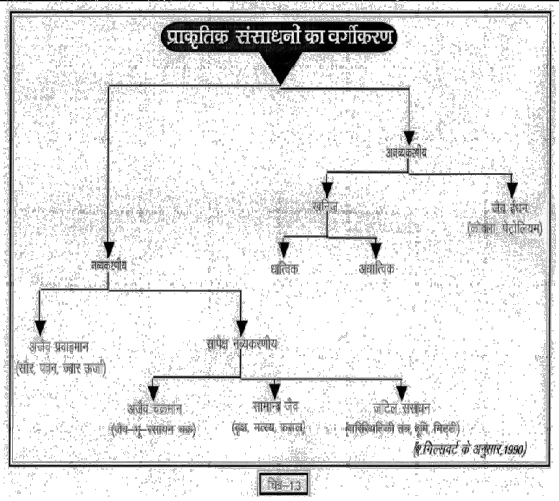

चित्र-1.3

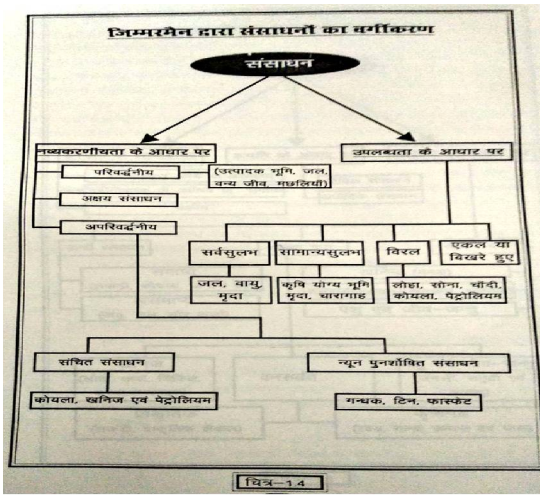

चित्र–1.4

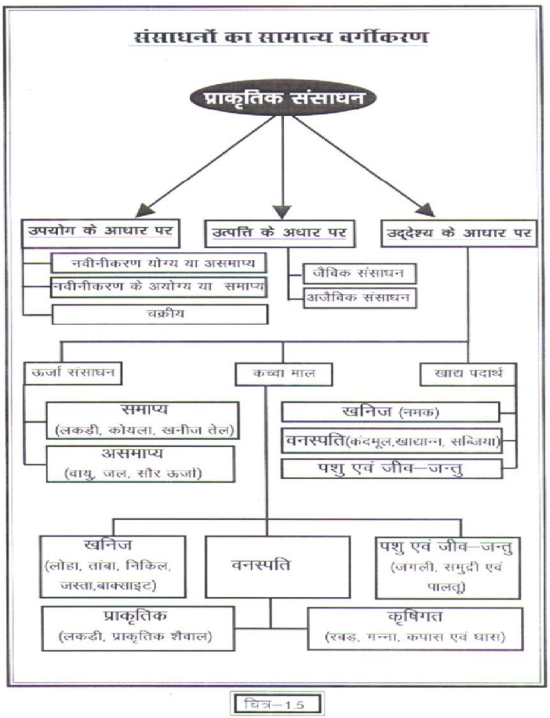

चित्र–1.5

जैविक संसाधन – गिल्सवर्ट ने जैविक संसाधनों के अन्तर्गत वनस्पति एवं जीव जन्तुओं को सम्मिलित किया है। जैविक संसाधन एवं मनुष्य अंतर्संवंधित हैं। जैविक संसाधनों में पुनरूत्पादन की क्षमता होती है तथा इनकी मात्रा में मनुष्य भी वृद्धि कर सकता है। जैविक संसाधनों की आयु भौतिक संसाधनों की तुलना में कम होती है तथा ये समाप्त हो सकते है। जैसे आज कल कुछ पेड़ पौधों एवं जीव–जन्तुओं का अस्तित्व ही समाप्त होता जा रहा है। (चित्र 1.3)

जैविक संसाधनों का वितरण भौतिक संसाधनों से प्रभावित होता है तथा भौतिक परिवेश के परिवर्तनों से जैविक संसाधन क्रमशः परिवर्तित होते रहते हैं।

वैसे तो सभी प्रकार के संसाधन भौतिक एवं जैविक संसाधनों के अन्तर्गत ही आ जाते हैं, किन्तु जिम्मरमैन (1952) ने संसाधनों के विभिन्न स्वरूपों, गुणों, उपयोगिता, उपलब्धता एवं संभाव्यता आदि आधारों पर संसाधनों का वर्गीकरण किया, जो (चित्र 1.4) से स्पष्ट है।

विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रस्तुत संसाधनों के वर्गीकरण को दृष्टिगत रखते हुए शोधकर्त्ता द्वारा संसाधनों का सामान्यवर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है, जो (चित्र 1.5) से स्पष्टहै।

1. उपयोगिता के आधार पर वर्गीकरण– जिम्मरमैन ने उपयोगिता अथवा नवीकरण के आधार पर संसाधनों का वर्गीकरण किया है। इसके अन्तर्गत वे संसाधन आते है जो उपयोग में लाने के बावजूद भी दीर्घ काल तक अक्षृण्ण वने रहते है तथा उनमें गुण वृद्धि भी की जा सकती है, जैसे मिट्टी, जल, वनस्पति आदि मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाकर तथा क्षरण को रोककर दीर्घकाल तक उन्नत कृषि की जा सकती है। इसे निम्न उपवर्गो में विभक्त किया गया है–

(1) अवक्षीय संसाधन– ऐसे संसाधन जो एक निश्चित मात्रा में ही प्राप्त होते है एवं उपयोग के बाद इनकी मात्रा समाप्त हाती है जैसे कोयला, पेंट्रोलियम, गैस, सोना, चाँदी आदि वर्तमान समय में अनेक जंगली पशुओं की नस्लें भी समाप्त होती जा रही है, किन्तु इनमें से कुछ ऐसे भी संसाधन है जिनकी गुणवत्ता में वृद्धि की जा सकती है जैसे– कोयला वैज्ञानिक एवं तकनीकी सहायता से कोयले की गुणवत्ता में वृद्धि की गयी है। सन् 1900 ई0 से पूर्व 10किग्रा0 कोयला जलाने पर जो उर्जा प्राप्त होती है वह अब मात्र 1.5 किग्रा0 कोयला जलाने पर ही प्राप्त हो जाती है अतः स्पष्ट है कि कोयले के उत्पादन में तो वृद्धि नही हुई किन्तु तकनीकी विकास के फलस्वरूप कोयले के उपयोग में हम पाँच मुनी वृद्धि कर सके।

संसाधनों के निर्माण में तकनीकी विकास की

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

महत्व पुर्ण एवं प्रभावशाली भूमिका रहती है यह तकनीकी ही है जो आज प्राकृतिक तटस्थ तत्वों को मूल्य प्रदान कर उन्हें संसाधनों की श्रेणी में सम्मिलित करती है आज पृथ्वी के जो पदार्थ मानव के लिए व्यर्थ है या अज्ञात है भविष्य में तकनीकी विकास के फलस्वरूप महत्वपूर्ण संसाधन बन सकते है। यूरोप के अधिकांश देश, संयुक्त राज्य अमेरिका कनाडा तथा जापान देशों की संस्कृति में तकनीकी विकास का उच्च स्तर महत्वपूर्ण है, जबकि भारत नेपाल तथा श्रीलंका जैसे देशों की संस्कृति में अध्यात्मिक मूल्यों का वरीयता प्रदान की जाती है विकसित प्रौद्योगिकी वाले देश अपने यहाँ के प्राकृतिक संसाधनों का प्रर्याप्त एवं तेजी के साथ सदुप्रयोग करते है साथ ही उनके प्राकृतिक संसाधनों का मूल्य भी अपेक्षाकृत अधिक होता है, जबकि पिछड़ी प्रौद्योगिकी वाले देश न तो अपने यहाँ के प्राकृतिक संसाधनों का समुचित उपयोग ही कर पाते है और न ही उनके संसाधनों का उचित मूल्य ही उन्हें प्राप्त हो पाता है।

प्राकृतिक संसाधनों का अध्ययन कर्ता प्रकृति के उस भाग का अध्ययन करता है जो किसी न किसी रूप में मानव से जुड़ा है तथा सदैव परिवर्तनशील होने के साथ–साथ मानवीय क्रियाकलापों को प्रभवित करता है। प्रकृति का भाग मानवीय ज्ञान के विकास तथा तकनीक क्षमता एवं क्षमता में सुधार के साथ–साथ विस्तृत होता चला जाता है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि ''समय के बढने साथ–साथ प्राकृतिक संसाधनों की मात्रा में उनके उपयोग या दुरूपयोग से कमी तो हो रही है लेकिन तकनीक के क्षेत्र में हो रहा सत्त विकास इन संसाधनों की प्रति इकाई और कुल उपयोग क्षमता में कई गुना वृद्धि कर देता है। प्राकृतिक संसाधन की उपयोग क्षमता हुई वृद्धि से संसाधन अवशेष राशि का मूल्य कई गुना बढ़ जाता है जिसे एक बड़े पुंज द्वारा प्रदर्शित किया जाता है, इसे जिम्मर मैने छाया पुंज का नाम देता है।

संसाधनों की छायापुँज या तकनीकी संचित भण्डार की यह विचार धारा अनन्त समय तक प्रभवी नही रहती। भूगर्भ में खनिज संसाधनो की एक निचिश्चत मात्रा है जिसका शोषण मानव दुत गति से कर रहा है। विश्व के कई महत्वपूर्ण खनिज ऐसे है कि उनकी वर्तमान उपभोग दर से वह इक्कसवीं शाताब्दी के प्रथम चरण में ही पूर्ण रूप से समाप्त हो जायेंगे। उस समय मानव का तकनीकी विकास का स्तर कितना भी ऊँचा क्यो हो जाय उन खनिजों को प्रतिस्थापित तो किया जा सकता है, पुनजीवित नही।

इस सिद्धान्त में जिमरमैन ने यह समझाने का प्रयास किया है कि यद्यपि वजन एवं आयतन में उपयोग द्वारा संचित संसाधन का ह्रास हो रहर है तथापि उसे प्राविधिक उपलब्धि से उनकी प्रति इकाई तथा कुल उपयोग क्षमता में कई गुनी वृद्धि हो रही है (चित्र 1.6)।

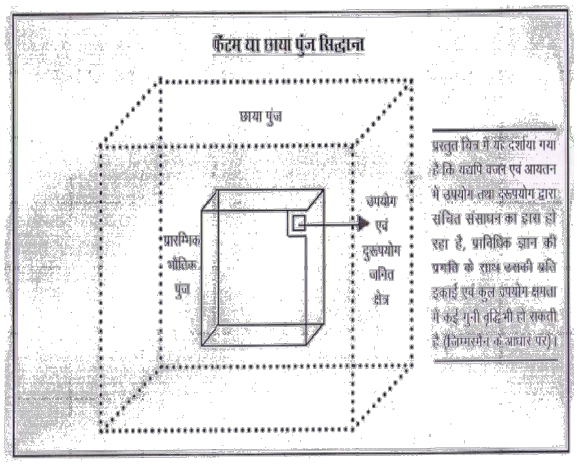

(2) परिवर्द्धनीय संसाधन – जिन संसाधन में गुणात्मक वृद्धि की जा सकती है उन्हें परिवर्धनीय या संवर्द्धनीय संसाधन कहा जाता है जैसे लोहा एक संवर्धनीय संसाधन है लोहे में गुणात्मक वृद्धि करके स्टेनलेस स्टील अथवा एलाय स्टील के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है इसी तरह कोयला यद्यपि एक अवक्षीय संसाधन है; किन्तु परिवर्धनीय भी है इस तरह परिवर्धनीय संसाधन दीर्घकालीन एवं अवक्षीय दोनों प्रकार के हो सकते है।

(3) अपरिवर्द्धनीय संसाधन – इसे अक्षय/सत्त, सनातन संसाधन भी कहा जा सकता है इसके अन्तर्गत वे संसाधन आते है जिनका परिवर्धन नही किया जा सकता किन्तु बार–बार उपयोग करने पर भी उनका पूर्णतः विनाश नही होता जैसे– महा सागरीय जल, जलवायु, सूर्यताप, उर्जा, वहता हुआ जल आदि।

2. उपलब्धता के आधार पर वर्गीकरण –उपलब्धता के आधार पर जिमरमैन ने संसाधनों को निम्न वर्गो में विभक्त किया है।

(अ) सर्वप्राप्य संसाधन– ऐसे संसाधन जो सामान्यतः प्रत्येक क्षेत्र में प्राप्त होते है यथा वायु, जल, मिट्टी और शक्ति एवं वायुमंडलीय तत्व आदि।

(ब) सामान्यतः प्राप्य संसाधन– ऐसे संसाधन जो प्रायः अधिकांश क्षेत्र में प्राप्त होते है यथा–जल, वनस्पति, पशुजीवन, चट्टानें, कृषि योग्य भूमि आदि।

(स) दुर्लभता से प्राप्य संसाधन– ऐसे संसाधन जो यत्र–तत्र ही प्राप्त हो प्राप्त हो पाते है यथा–सोना, चाँदी एवं अन्य बहुमूल्य खनिज, प्राकृतिक गैस, बहुमूल्य चट्टानें आदि।

(द) अद्वितीय संसाधन– ऐसे संसाधन जो प्रर्याप्त मात्रा एवं गुण में मुश्किल से ही कहीं–कहीं ही प्राप्त हो पाते है यथा– यूरेनियम, जिरकोनियम, क्रोमाइट, थोरियम आदि।

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

3. संभाव्यता के आधार पर वर्गीकरण – जिमरमैन ने उपयोग/संभाव्यता के आधार पर संसाधनों का निम्न वर्गीकरण किया है–

(अ) अप्रयुक्त संसाधन– इसके अन्तर्गत वे संसाधन आते है जो किसी कारण विशेष से अब तक उपयोग में नहीं लाए जा सके है।

(ब) अप्रयोजनीय संसाधन– ऐसे संसाधन जो वर्तमान ज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के उपयोग के बाद भी भविष्य में उपयोग में नही लाए जा सकते है।

(स) संभाव्य संसाधन– ऐसे संसाधन जिनका उपयोग भविष्य में आवश्यकता अनुसार किया जा सकता है।

(द) सुषुप्त संसाधन– ऐसे संसाधन जिनका उपयोग अभी तक नहीं हो पाया है। किसी भी देश, काल या क्षेत्र में प्रर्याप्त संसाधन उपलब्ध हैं या नही, यह उस देश, काल या क्षेत्र की जनसंख्या, संसाधनों के लिए उनकी मांग एवं उसके जीवन स्तर पर निर्भर करता हैं किसी क्षेत्र विशेष में संसाधनों का लाभ, उस क्षेत्र में प्राप्त संसाधनों की अपर्याप्त मात्रा को तकनीकि विधि से विदोहन कर एवं उपयोग के गुणों में वृद्धि कर प्राप्त किया जा सकता है।

एकरमैन (1959) ने जनसंख्या एवं संसाधन के अन्तर्सम्बंधों को एक समीकरण के रूप में निम्न प्रकार प्रस्तुत किया है– जनसंख्या जीवन स्तर = कुल संसाधन आधार ग संसाधनों की प्राकृतिक/भौतिक विशेषतायें एवं गुण (प्राविधिकी ग प्रशासनिक ग संसाधनों की स्थिरता तकनीक) + आर्थिक उत्पादनों को निर्धारित करने वाले तत्व + व्यापार द्वारा प्राप्त संसाधन + सामाजिक, राजनीतिक संस्थाएं एवं उनकी विशेषतांए–संसाधनों की उपयोग विधि।

इस प्रकार स्पष्ट है कि संसाधन अनेक प्रकार के होते हैं। मानव अपनी बुद्धि क्षमता एवं आवश्यकता के अनुसार उनका उपयोग करता है, और अपना विकास करता है। अतः जो क्षेत्र संसाधन विहीन हैं अथवा जिन क्षेत्रों में संसाधन हैं, किन्तु उनका समुचित उपयोग नहीं हो पा रहा है, वो क्षेत्र विकास से मिलों दूर हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. Puri, G.S., (1966): "Economic development and Natural resources of devoleping Coun tries", National Geodraphical Journal of In dia, Voll. 7, No- 2, P. 67-86.
2. Sivprakash, (1994) : "Sustainable develop ment and resource management", National geographer, Allahabad geographical society, Allahabad. Vol- 29, P- 121-139.
3. तिवारी, वृजेश कुमार, (2002) : जनपद मऊ (उ0 प्र0) में जनसंख्या, पर्यावरण एवं विकास एक भौगोलिक अध्ययन, अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, वीर वहादूर सिंह पूर्वाचल विश्वविद्यालय, जौनपुर।
4. पाठक, गणेश कुमार, (1990) : ''संसाधन संरक्षण कुछ पक्ष, अविष्कार वर्ष 20, अंक– 11, पृष्ठ– 34–35, एन0 आर0 डी0 सी0, नई दिल्ली
5. सिंह, उर्मिलेश, (2002) : ''जनपद बलिया के संसाधनो का भौगोलिक विश्लेषण एवं नियोजन'', अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, वीर वहादूर सिंह पूर्वाचल विश्वविद्यालय जौनपुर।
6. ओझा, सुनील कुमार, (2005) : ''जनपद मऊ (उ0प्र0) के संसाधनो का भौगोलिक विश्लेषण एवं नियोजन'', अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, वीर वहादूर सिंह पूर्वाचल विश्वविद्यालय जौनपुर।